रूसी कहानी

लेव तोलस्तोय

कितनी जमीन?

कितनी जमीन? (रूसी कहानी) : लेव तोल्सतोय (हिंदी कहानी)

(इस कहानी से महात्मा गांधी बहुत प्रभावित हुए थे। उन्होंने इसका अनुवाद गुजराती में किया था और इसकी बहुत-सी प्रतियां पाठकों में वितरित कराई थीं। गांधीजी के अपरिग्रह सिद्धान्त का इस कहानी में बड़े मार्मिक ढंग प्रतिपादन हुआ है। हम हिन्दी के यशस्वी लेखक श्री जैनेन्द्र कुमारजी द्वारा किया हुआ भावानुवाद दे रहे हैं। इसमें उन्होंने पात्रों के नाम बदल दिये हैं और रुसी की जगह रंग भी भारतीय कर दिया है।)

दो बहने थी। बड़ी का कस्बे में एक सौदागर से विवाह हुआ था। छोटी देहात में किसान के घर ब्याह थी।
बड़ी का अपनी छोटी बहन के यहां आना हुआ। निबटकार दोनों जनी बैठीं तो बातों का सूत चल पड़ा। बड़ी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी, "देखो, कैसे आराम से हम रहते हैं। फैंसी कपड़े और ठाठ के सामान! स्वाद-स्वाद की खाने-पीने की चीजें, और फिर तमाशे-थियेटर, बाग-बगीचे!"
छोटी बहन को बात लग गई। अपनी बारी पर उसने सौदागर की जिंदगी को हेय बताया और किसान का पक्ष लिया। कहा, "मैं तो अपनी जिंदगी का तुम्हारे साथ अदला-बदला कभी न करुं।

हम सीधे-सादे और रुखे-से रहते हैं तो क्या, चिंता-फिकर से तो छूटे हैं। तुम लोग सजी-धजी रहती हो, तुम्हारे यहां आमदनी बहुत है, लेकिन एक रोज वह सब हवा भी हो सकता है, जीजी। कहावत हे ही—'हानि-लाभ दोई जुड़वा भाई।' अक्सर होता है कि आज तो अमीर है कल वही टुकड़े को मोहताज है। पर हमारे गांव के जीवन में यह जोखिम नहीं है। किसानी जिंदगी फूली और चिकनी नहीं दीखती तो क्या, उमर लंबी होती है और मेहनत से तन्दुरुस्ती भी बनी रहती है। हम मालदार न कहलायेगे: लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी न होगी।"

बड़ी बहन ने ताने से कहा, "बस-बस, पेट तो बैल और कुत्ते का भी भरता है। पर वह भी कोई जिंदगी है? तुम्हें जीवन के आराम, अदब और आनन्द का क्या पता है? तुम्हारा मर्द जितनी चाहे मेहनत करे, जिस हालत में तुम जीते हो, उसी हालत में मरोगे। वहीं चारों तरफ गोबर, भुस, मिट्टी! और यही तुम्हारे बच्चों की किस्मत में बदा है।"

छोटी ने कहा, "तो इसमें क्या हुआ! हां, हमारा काम चिकना-चुपड़ा नहीं हैं; लेकिन हमें किसी के आगे झुकने की भी जरुरत नहीं है। शहर में तुम हजार लालच से घिरी रहती हो। आज नहीं तो कल की क्या खबर है! कल तुम्हारे आदमी को पाप को लोभ—जुआ, शराब और दूसरी बुराइयां फंसा सकते हैं, तब घड़ी भर में सब बरबाद हो जायगा। क्या ऐसी बातें अक्सर होती नहीं हैं?"

घर का मालिक दीना ओसारे में पड़ा औरतों की यह बात सुन रहा था। उसने सोचा कि बात तो खरी है। बचपन से मां धरती की सेवा में हम इतने लगे रहते हैं कि कोई व्यर्थ की बात हमारे मन में घर नहीं कर पाती है। बस, है तो मुश्किल एक। वह यह कि हमारे पास जमीन काफी नहीं है। जमीन खूब हो तो मुझे किसी का परवा न रहे, चाहे शैतान ही क्यों न हो!

वहीं कोने में शैतान दुबका बैठा था। उसने सबकुछ सुना। वह खुश था किसान की बीवी ने गांव की बड़ाई करके अपने आदमी को डींग पर चढ़ दिया। देखो न, कहता था कि जमीन खूब हो तो फिर चाहे शैतान भी आ जाय, तो परवा नहीं।

शैतान ने मन में कहा कि अच्छा हजरत, यही फैसला सही। मैं तुमको काफी जमीन दूंगा और देखना है कि उसी से तुम मेरे चंगुल में होते हो कि नहीं।

गांव के पास ही जमींदारी की मालकिन की कोठी थी। कोई तीन सौ एकड़ उनकी जमीन थी। उनके अपने आसामियों के साथ बड़े अच्छे सम्बन्ध रहते आये थे; लेकिन उन्होंने एक कारिन्दा रक्खा, जो पहले फौज में रहा था। उसने आकर लोगों पर जुरमाने ठोकरे शुरु कर दिये।

दीना का यह हाल था कि वह बहुतेरा करता, पर कभी तो उसका बैल जमींदारी की चरी में पहुंच जाता, कभी गाय बगिया में चरती पाई जाती। और नहीं तो उनकी रखाई हुई घास में बछिया-बछड़ा ही जा मुंह मारते। हर बार दीना को जुर्माना उठाना पड़ता। जुर्माना तो वह देता, पर बेमन से। वह कुनमुनाता

और चिढ़ा हुआ-सा घर पहुंचता और अपनी सारी चिढ़ घर में उतारता। पूरे मौसम कारिंदे की वजह से उसे ऐसा त्रास भुगतना पड़ा।

अगले जाड़ों में गांव में खबर हुई कि मालकिन अपनी जमीन बेच रही हैं और मुंशी इकरामअली से सौदे की बातचीत चल रही है। किसाने सुनकर चौकत्रे हुए। उन्होंने सोचा कि मुंशीजी की जमीन होगी तो वह जमींदार के कारिन्दे से भी ज्यादा सख्ती करेंगे और जुर्माने चढ़ावेंगे और हमारी तो गुजर-बसर इसी जमीन पर है।

यह सोचकर किसान मालकिन के पास गये। कहा कि मुंशीजी को जमीन न दीजिए। हम उससे बढ़ती कीमत पर लेने को तैयार हैं। मालकिन राजी हो गईं।

तब किसानों ने कोशिश की कि मिलकर गांव-पंचायत की तरफ से वह सब जमीन पर जा से ताकि वह सभी की बनी रहे। दो बार इस पर विचार करने को पंचायत जुड़ी पर फैसला न हुआ। असल में शैतान की सब करतूत थी। उसने उनके बीच फूट डाल दी थी। बस, तब वे मिलकर किसी एक मत पर आ ही नहीं से। तय हुआ कि अलग-अलग करके ही वह जमीन ले ली जाय। हर कोई अपने बित्ते के हिसाब से ले। मालकिन पहले की तरह इस बात पर भी राजी हो गई।

इतने में दीना को मालूम हुआ कि एक पड़ोसी इकट्ठी पचास एकड़ जमीन ले रहा है और जमींदारिन राजी हो गई हैं कि आधा रुपया अभी नकद ले लें, बाकी साल भर बाद चुकता हो

जायगा।

दीना ने अपनी स्त्री से कहा कि और जने जमीन खरीद रहे है। हमें भी बीस या इतने एकड़ जमीन ले लेनी चाहिए। जीना वैसे भार हो रहा है और वह कारिदा जुर्माने-पर-जुर्माने करके हमें बरबाद ही कर देगा।

उन दोनों ने मिलकर विचार किया कि किस तरकीब से जमीन खरीदी जाय। सौ कलदार तो उनके पास बचे हुए रखे थे। एक उन्होंने उमर पर आया अपना बछड़ा बेच डाला। कुछ माल बंधक रक्खा। अपने बड़े बेटे को मजदूरी पर चढ़ाकर उसकी नौकरी के मद्दे कुछ रुपया पेशगी ले लिया। बाकी बचा अपनी स्त्री के भाई से उधार ले लिया। इस तरह कोई आधी रकम उन्होंने इकट्ठी कर ली।

इतना करे दीना ने एक चालीस एकड़ जमीन का टुकड़ा पसंद किया, जिसमें कुछ हिस्से में दरख्त भी खड़े थे। मालकिन के पास उसका सौदा करने पहुंचा। सौदा पट गया ओर वहीं-के-वहीं नकद उसने साई दे दी। फिर कस्बे में जाकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली।

अब दीना के पास अपनी निजी जमीन थी। उसने बीज खरीदा और इसी अपनी जमीन पर बोया, इस तरह वह अब खुद जमींदार हो गया।

इस तरह दीना काफी खुशहाल था। उसके संन्तोष में कोई कमी न रहती। अगर बस पड़ोसियों की तरफ से उसे पूरा चैन मिल सकता। कभी-कभी उसे खेतों पर पड़ोसियों के मवेशी आ चरते।

दीना ने बहुत विनय के साथ समझाया, लेकिन कुछ फर्क नहीं हुआ। उसके बाद और-तो-और, घोसी छोकरे गांव की गायों को दिन-दहाड़े उसकी जमीन में छोड़ देने लगे। रात को बैल खेतों का नुकसान करते। दीना ने उनको बार-बार निकलवाया और बार-बार उसने उनके मालिकों को माफ किया। एक अर्से तक वह धीरज रक्खे रहा और किसी के खिलाफ कार्रवाई नहीं की। लेकिन कब तक? आखिर उसका धीरज टूट गया और उसने अदालत में दरख्वास्त दी। मन में जानता तो था कि मुसीबत की वजह असली यह है कि और लोगों के पास जमीन की कमी है, जान-बूझकर दीना की सताने की मंशाा किसी की नहीं है। लेकिन उसने सोचा कि इस तरह मैं नरमी दिखाता जाऊंगा, तो वे लोग शह पाते जायंगे और मेरे पास जितना है सब बरबाद कर देंगे। नहीं उनको एक सबक सिखाना चाहिए।

सो उसने ठान ली। एक सबक दिया, दूसरा। नतीजा यह कि दो-तीन किसानों पर अदालत से जुर्माना हो गया। इस पर तो पास-पड़ोस के लोग दीना से कीना रखने लगे। अब कभी-कभी जान-बूझकर भी तंग करने के लिए अपने मवेशी उसके खेतों में छोड़ देते। एक आदमी गया और उसे जरुरत अगर घर में ईंधन की थी, तो उसने रात में जाकर सात पूरे शीशम के दरख्त काट गिराये। दीना ने सवेरे घूमते हुए देखा कि पेड़ कटे हुए पड़े है। वे धरती से सटे हैं और उनकी जगह खड़े ठूंठ मानो दीना को चिढ़ा रहे हैं। देखकर उसको तैश आ गया।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहां का तो दूसरा दूर का पेड़

काटा होता तो भी गनीमत थी। लेकिन कम्बख्त ने आसपास के सब पेड़ काटकर बगिया को वीरान करे दिया। पता लगे तो खबर लिये बिना न छोडूं। उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है। आखिर तय किया कि हो-न-हो, यह धुन्नू होगा। और कोई ऐसा नहीं कर सकता। यह सोच धुन्नू की तरफ गया गया कि शायद कुछ सबूत मिल जाय, लेकिन वहां कुछ चोरी का सबूत मिला नहीं और आपस में कहा-सुनी और तेजा-तेजी के सिवा कुछ नतीजा न निकला। तो भी उसे मने में पक्का विश्वास हो गया कि धुन्नू ने यह किया है और जाकर रपट लिखा दी। धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला। एक अदालत से दूसरी अदालत हुई। आखिर में धुन्नू बरी हो गया, क्योंकि कोई सबूत और गवाह ही नहीं थे। दीना इस बात पर और भी झल्ला उठा और अपना गुस्सा मजिस्ट्रेट पर उतारने लगा।

इस तरह दीना का अपने पड़ोसियों और अफसरों से मनमुटाव होने लगा, यहांतक कि उसे घर में भी आग लगाने की बातें सुनी जाने लगीं। हालांकि दीना के पास अब जमीन ज्यादा थी और जमींदारों में उसी गिनती थी, पर गांव में और पेचों में पहला-सा उसका मान न रह गया था।

इसी बीच अफवाह उड़ी कि कुछ लोग गांव छोड़-छोड़कर कहीं जो रहे हैं।

दीना ने सोचा कि मुझे तो अपनी जमीन छोड़ने की जरुरत है ही नहीं। लेकिन और कुछ लोग अगर गांव छोड़ेंगे तो चलो, गांव में

भीड़ ही कम होगी। मैं उनकी जमीन खुद ले लूंगा। तब ज्यादा ठीक रहेगा। अब तो जमीन की कुछ तंगी मालूम होती है। एक दिन दीना घर के ओसारे में बैठा हुआ था कि एक परदेसी-सा किसान उधर से गुजरता हुआ उसके घर उतरा। वह वहां रात-भर ठहरा और खाना भी वहीं खाया। दीना ने उससे बातचीत की कि भाई, कहां से आ रहे हो? उसने कहा दरिया सतलज के पास से आ रहा हूं। वहां बहुत काम है। फिर एक में से दूसरी बात निकली और आदमी ने बताया कि उस तरफ नई बस्ती बस रही है। उसे अपने गांव के कई और लोग वहां पहुंचे हैं। वे सोसायटी में शामिल हो गये हैं और हरेक को बीस एकड़ जमीन मुफ्त मिली है। जमीन ऐसी उम्दा है कि उस पर गेहूं की पहली फसल जो हुई तो आदमी से ऊंची उसी बालें गईं और इतनी घनी कि दरांत के एक काट में एक पूला बन जाय। एक आदमी के पास खाने को दाने न थे। खाली हाथ वहां पहुंचा। अब उसके पास दो गायें, छ: बैल और भरा खलिहान अलग। दीना के मन में भी अभिलाषा पैदा हुई। उसने सोचा कि मैं यहां तंग संकरी-सी जगह में पड़ा क्या कर रहा हूं, जबकि दूसरी जगह मौका खुला पड़ा है। यहां की जमीन, घर-बार बेच-बाचकर नकदी बना वहीं क्यों न पहुंचूं और नये सिरे से शुरु करके देखूं? यहां लोगों की गिचपित हुई जाती है। उससे दिक्कत होती है और तरक्की रुकती है, लेकिन पहले खुद जाकर मालूम कर आना चाहिए कि क्या बात है, सो बरसात के बाद तैयारी करे वह चल दिया। पहले रेल में गया। फिर सैकड़ों मील बैलगाड़ी

पर और पैदल सफर करता हुआ सतलज के पारवाली जगह पर पहुंचा। वहां देखा कि जो उस आदमी ने कहा था, सब सच है। सबके पास खूब जमीन है। हरेक को सरकार की तरफ से बीस-बीस एकड़ जमीन मिली हुई है, या जो चाहे खरीद सकता है। और खूबी यह कि कौड़ियों के मोल जितनी चाहे, जमीन और भी ले सकता है।

सब जरुरी बातें मालूम करे दीना जाड़ों से पहले-पहल घर लौट आया। आकर देश-छोड़ने की बात सोचने लगा। नफे के साथ उसने सब जमीन बेच डाली। घर-मकान, मवेशी-डंगर सबकी नकदी बना ली और पंचायत से इस्तीफा दे दिया और सारे कुनबे को साथ ले सतलज-पार के लिए रवाना हो गया।

दीना परिवार के साथ उस जगह पहुंच गया। जाते ही एक बड़े गांव की पंचायत में शामिल होने की अर्जी दी। पंचों की उसने खूब खातिर की और दावतें दीं। जमीन का पट्टा उसे सहज मिल गया। मिली-जुली जमीन में से उसे और उसके बाल-बच्चों के इस्तेमाल के लिए पांच हिस्से यानी सौ एकड़ जमीन उसको दे दी गई। वह सब इकट्ठी नहीं थी, कई जगह टुकड़े थे। अलावा इसके पंचायती चरागाह भी उसके लिए खुला कर दिया गया। दीना ने जरुरी इमारतें अपने लिए खड़ी कीं और मवेशी खरीद लिये। शामलात जमीन में से ही अब उसको इतना मिल गया था कि पहले से तिगुनी, और जमीन उपजाऊ थी। वह पहले से कई गुना खुशहाल हो गया। उस पास चराई के लिए खुला मैदान-का-मैदान पड़ा था और जितने चाहे वह ढोर रख सकता

था।

पहले तो वहां जमने और मकान-वकान बनवाने का उसे रस रहा। वह अपने से खुश था और उसे गर्व मालूम होता था। पर जब वह इस खुशहाली का आदी हो गया तो उसे लगने लगा कि यहां भी जमीन काफी नहीं है; ओर होती तो अच्छा था। पहले साल उसने गेहूं बुवाया और जमीन ने अच्छी फसल दी। वह फिर गेहूं ही बोते जाना चाहता था, पर उसे लिए और पड़ती जमीन काफी न थी। जो एक बार फसल दे चुकती थी, वह उसे तरफ एक साथ दोबारा गेहूं नहीं देती थी। एक या दो साल उससे गेहूं ले सकते थे, फिर जरुरी होता था कि धरती को आराम दिया जाय। बहुत लोग ऐसी जमीन चाहनेवाले थे, लेकिन सबके लिए आती कहां से? इससे बदाबदी और खींचातानी होती थी। जो संपन्न थे, वे गेहूं उगाने के लिए जमीन चाहते थे। जो गरीब थे, वे अपनी जमीन से जैसे-तैसे पैसा वसूल करना चाहते थे, ताकि टैक्स वगैरा अदा कर सकें। दीना और गेहूं बोना चाहता था। इसलिए एक साल के लिए किराये पर उसने और जमीन ले ली। खूब गेहूं बोया और फसल भी खूब हुई। लेकिन जमीन गांव से दूर पड़ती थी और गल्ला मीलों दूर से गाड़ी में भर-भरकर लाना होता था। कुछ दिनों बाद दीना ने देखा कि कुछ बड़े-बड़े लोग अलग फाम्र डाल कर रहते हैं और वह खूब पैसा कमा रहे हैं। उसने सोचा कि आगर मैं इकट्ठी कायमी जमीन ले लूं और वहीं घर बसाकर रहूं तो बात ही दूसरी हो जाय।

इस तरह इकट्ठी और कायमी जमीन खरीदने का सवाल बार-बार उसके मन में उठने लगा।

तीन साल इस तरह निकल गये। दीना जमीन किराये पर लेता और गेहूं बोता। मौसम ठीक गये, काश्त अच्छी हुई और उस पास माल जमा होने लगा। वह इसी तरह संतोष से बढ़ता जा सकता था, लेकिन हर साल और लोगों से जमीन किराये पर लेने और उसके लिए कोशिश और सिरदर्दी करने के काम से वह थक गया था। जहां जमीन अच्छी होती, वहीं लेने वाले दौड़ पड़ते। इससे बहुत चौकस-चौकत्रा और होशियार न रहा जाता तो जमीन मिलना असंभव था। यह एक परेशानी की बात थी। तिसपर तीसरे साल ऐसा हुआ कि दीना ने एक महाजन के साझे में कुछ काश्तकारों से एक जमीन किराये में ली। जमीन गोड़ कर तैयार हो चुकी थी कि कुछ आपस में तनातनी हो गई और किसान लोग झगड़ा लेकर अदालत पहुंचे। अदालते से फिर मामला बिगड़ गया और की-कराई मेहनत बेकार गई।

दीना ने सोचा कि अगर कहीं जमीन मेरी कायमी मिल्कियत की होती तो मैं आजाद होता और क्यों यह पचड़ा बनता और बखेड़ बढ़ता?

उस दिन से वह जमीन के लिए निगाह रखने लगा। आखिर एक किसान मिला, जिसने एक हजार जमीन खरीदी थी, लेकिन पीछे उसकी हालत संभल न सकी। अब मुसीबत में पड़कर वह उसे सस्ती देने को तैयार था। दीना ने बात उससे चलाई और सौदा करना शुरु किया। आदमी मुसीबत में था, इससे दीना भाव-दर

में कमी करने लगा। आखिर कीमत एक हजार रुपये तय पाई। कुछ नगद दे दिया जाय, बाकी फिर। सौदा पक्का हो गया था कि एक सौदागर अपने घोड़े के दाने-पानी के लिए उसे घर के आगे ठहरा। उससे दीना की बातचीत जो हुई तो सौदागर ने कहा कि मैं नर्मदा नदी के उस पार से चला आ रहा हूं। वहां १५०० एकड़ उम्दा जमीन कुल पांच सौ रुपये में मैंने खरीदी थी। सुनकर दीना ने उससे और सवाल पूछे। सौदागर ने कहा:

"बात यह है कि अफसर-चौधरी से मेल-मुलाकात करने का हुनर चाहिए। सौ से ज्यादा रुपये तो मैंने रेशमी कपड़े और गलीचे देने में खर्च किये होंगे। फिर शराब, फल-मेवों की डालियां, चाय-सेट वगैरा के उपहार अलग। नतीजा यह कि फी एकड़ मुझे जमीन आनों के भाव पड़ गई।"कहकर सौदागर ने अपने दस्तावेज सब दीना के सामने कर दिये।

फिर कहा, "जमीन ऐन नदी के किनारे है और सारे-का-सारा किता इकट्ठा है। उपजाऊ इतना कि क्या पूछो।"

दीना ने इस पर उत्सुकतापूर्वक सौदागर से सवाल-पर-सवाल किये। उसने बताया:

"वहां इतनी जमीन है, इतनी कि तुम महीनों चलो तो पूरी न हो। वहां के लोग ऐसी सीधे हैं, जैसे भेड़ और जमीन समझो, मुफ्त के भाव ले सकते हो।"

दीना ने सोचा, यह ठीक रहेगा। भला मैं अब हजार एकड़ के लिए हजार रुपया क्यों फंसाऊं?

अगर वहां जाकर इतना रुपया जमीन में लगाऊं, तो यहां से कई

गुनी ज्यादा जमीन मुझे पड़ जायगी।

दीना ने पूछताछ की कि उस जगह कैसे जाया जाय? सौदागर ने सब बतला दिया। वह चला गया तो दीना ने भी अपनी तैयारी शुरु की। बीवी को कहा कि घर देखना-भालना और खुद एक आदमी साथ ले, यात्रा को निकल पड़ा। रास्ते में एक शहर में ठहरकर, वहां से चाय के डब्बे, शराब और इसी तरह और उपहार की चीजें, जो सौदागर ने बताई थीं, ले लीं। फिर दोनों बढ़ते गये, बढ़ते गये। चलते-चलते आखिर सातवें रोज वहां पहुंचे, जहां से कोल लोगों की बस्ती शुरु होती थी। उसने देखा कि सौदागर ने जो बात बताई थी, वह सही थी। दरिया के पास जमीन-ही-जमीन थी। सब खाली। ये लोग उससे काम न लेते थे। कपड़े या सिरकी के तम्बू में रहते, शिकार करते, मवेशी पालते और ऐसे ही मौज करते थे। ने रोटी बनाना जानते थे, न अनाज उगाना सीखा था। दूध का छाछ-मठा बनाते, पनीर बनाते और उसी एक तरह की शराब भी तैयार कर लेते थे। ये सब काम औरतें करती। मर्द खाने-पीने और फुर्सत के वक्त चैन की बंसी बजाने में रहते। वे लोग मजबूत और स्वस्थ थे और काम-धाम के नाम बिना कुछ किये मगन रहते थे। अपने से बाहर उन्हें कुछ पता न था। पढ़ना-लिखना जानते नहीं थे और हिन्दी तक नहीं जानते थें पर थे भले-सीधे स्वभाव के। दीना को देखते ही वे अपने तम्बुओं से निकल आये और उसके चारों तरफ जमघट लगाकर खड़े हो गये। उनमें से एक दुभाषिये की मार्फत दीना ने बताया कि मैं जमीन की खातिर आया हूं। वे लोग बड़े

खुश मालूम हुए। बड़ी आवभगत के साथ वे उसे अपने अच्छे-स-अच्छे डेरे में ले गये। वहां कालीन पर बिछे गद्दे पर बिठाया ओर खुद नीचे चारों ओर घिसकर बैठ गये। उसे पीने को चाय दी और दारु भी। उसकी मेहमानी में बढ़-बढ़कर दावत हुई। दीना ने भी गाड़ी में से अपने पास से भेंट की चीजें निकाली और सबको थोड़ी-थोड़ी चाय बांटी। कोल लोग बड़े खुश थे। उन्होंने आपस में इए अजनबी की बाबत खूब चर्चा की। फिर दुभाषिये से कहा कि मेहमान को सब समझा दो।

दुभाषिये ने कहा कि ये लोग कहना चाहते हैं कि हम आपके आने से खुश हैं। हमारे यहां का कायदा है कि मेहमान की खातिर जो हमसे बन सके, करें। आपकी कृपा के हम कृतज्ञ हैं। बतलाइए कि हमारे पास कौन-सी चीलज है, जो आपको सबसे पसंद हैं, ताकि हम उसीसे आपकी खातिर कर सकें।

दीना ने जवाब दिया कि जिस चीज को देखकर मैं बहुत खुश हूं, वह आपकी जमीन है। हमारे यहां जमीन की कमी है और वह उपजाऊ भी इतनी नहीं होती, लेकिन यहां उसका कोई पार नहीं है और वह जमीन उपजाऊ भी खूब है। मैंने तो अपनी आंखों से यहां-जैसी धरती दूसरी देखी नहीं।

दुभाषिये ने दीना की बात अपने लोगों को समझा दी। कुछ देर वे आपस में सलाह करते रहे। दीना समझ नहीं सकता कि वे क्या कह रहे हैं। लेकिन उसने देखा कि वे बहुत खुश मालूम होते है, बड़े हंस रहे हैं और जोर-जोर से बोल रहे हैं। अनंतर वे चुप हुए और दीना की तरफ देखने लगे।

फिर आपस में बात करने लगे। मालूम पड़ा कि जैसे उनमें कुछ दुविधा है। दीना ने पूछा कि उन लोगों में अब किस बात की अटक है। दुभाषिये ने बताया कि उनमें कुछ की राय है कि सरदार से जमीन देने के बारे में और पूछ लेना चाहिए, गैर-हाजिरी में कुछ कर डालना ठीक नहीं है। दूसरों का खयाल है कि इस बात में सरदार के लौटने की राह देखने की जरुरत नहीं है, जरा-सी तो बात है।

यह विवाद चल रहा था कि एक आदमी बड़ी-सी बालदार टोपी पहने वहां आ पहुंचा। सब चुप होकर उसके संम्मान में खड़े हो गये। दुभाषिये ने कहा कि यही हमारे सरदार है।

दीना ने फौरन अपने सामान में से एक बढ़िया लबाद निकाला और चाय का एक बड़ा डिब्बा, और अन्य चीजें सरदार को भेंट कीं। सरदार ने भेंट स्वीकार की और अपने आसन पर आ बैठा। बैठते ही कोल लोगों ने उससे कुछ कहना शुरु किया। सरदार कुछ देर सुनता रहा, फिर उसने उन्हें चुप रहने का इशारा किया। उसे बाद दीना की तरफ मुखातिब होकर हिन्दुस्तानी में कहा:

"इन भाइयों ने जो कहा, ठीक है। जितनी जमीन चाहे चुन लो। हमारे यहां उसका घाटा नहीं है।"

दीना ने सोचा कि मैं मनचाहे जितनी जमीन कैसे ले सकता हूं। पक्का करने के लिए दस्तावेज वगैरा भी तो चाहिए, नहीं तो जैसे आज इन्होंने कह दिया कि यह तुम्हारी है, पीछे वैसे ही उसे ले भी सकते हैं।

प्रकट में उसने कहा, "आपकी दया के लिए मैं कृतज्ञ हूं। आपके

पास बहुत धरती है और मुझे थोड़ी-सी चाहिए। लेकिन मुझे भरोसा होना चाहिए कि मेरा अपना छोटा टुकड़ा कौन-सा है और यह कि वह मेरा ही है। क्या ऐसा नहीं हो सता कि जमीन को नाप लिया जाय और उतना टुकड़ा फिर मेरे हवाले कर दिया जाय? मरना-जीना ईश्वर के हाथ है और संसार में यही चक्कर चलता है। आप दयावान लोग तो मुझे यह देते हैं, पर हो सता है कि पीछे आपकी औलाद उसीको वापस ले लेना चाहे तब?"

सरदार ने कहा, "तुम्हारी बात ठीक है। जमीन तुम्हारे हवाले ही कर दी जायगी।"

दीना ने कहा, "सुना है, यहां एक सौदागर आया था। उसको भी आपने जमीन दी थी और उस बाबत कागज पक्का कर दिया था। वैसे ही मैं चाहता हूं कि कागज पक्का हो जाय।"

सरदार समझ गया।

बोला, "हां, जरुर। यह तो आसानी से हो सकता है। हमारे यहां एक मुंशी है, कस्बे में चलकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली जायगी और रजिस्ट्री हो जायगी।"

दीना ने पूछा, "कीमत की दर क्या होगी?"

"हमारी दर तो एक ही है। एक दिन के एक हजार रुपये।"

दीना समझा नहीं। बोला, "दिन! दिन का हिसाब यह कैसा है? यह बताइये कितने एकड़?"

सरदार ने कहा, "यह सब गिनना-गिनाना हमसे नही होता। हम तो दिन कि हिसाब से बेचते हैं, जितनी जमीन एक दिन में पैदल चलकर तुम नाप डालो, वही तुम्हारी। और कीमत है ही दिनभर

की एक हजार।"

दीना अचरज में पड़ गया। कहा, "एक दिन में तो बहुत-सी जमीन को घेरा जा सकता है।"

सरदार हंसा। बोला, "हां, क्यों नही। बस, वह सब तुम्हारी। लेनि एक शर्त है। अगर तुम उसी दिन, उसी जगह न आ गये, जहां से चले थे, तो कीमत जब्त समझी जायगी।"

"लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि मैं इस जगह से चला था।"

"क्यों, हम सब साथ चलेंगे और जहां तुम ठहरने को कहोगे, ठहरे रहेंगे। उस जगह से शुरु करना और वहीं लौट आना। साथ फावड़ा ले लेना। जहां जरुरी सूमझा, निशान लगा दिया। हर मोड़ पर एक गड्ढा किया और उस पर घास को जरा ऊंचा चिन दिया। पीछे फिर हमलोग चलेंगे और हल से इस निशान से उस निशान तक हदबन्दी खींच देंगे। अब दिन भर में जितना चाहो, बडे-से-बड़े चक्कर तुम लगा सकते हो। पर सूरज छिपने से पहले जहां से चले थे, वहां आ पहुंचना। जितनी जमीन तुम इस तरह नाप लोगे, वह तुम्हारी हो जायगी।"

दीना खुश हुआ। तय हुआ कि अगले सवेरे ही चलना शुरु कर दिया जायगा। फिर कुछ गपशप हुई, खाना-पीना हुआ। ऐसे ही करते-कराते रात हो गई। दीना के लिए उन्होंने खूब आराम का परों का बिस्तर लगा दिया और वे लोग रातभर के लिए विदा हो गये। कह गये कि पौ फटने से पहले ही वे आ जायंगे, ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुंच जाया जाय।

दीना अपने परों के बिस्तरे पर लेटा तो रहा, पर उसे नींद ने

आई। रह-रहकर वह जमीन के बारे में सोचने लगता था: "चलकर मैं कितनी जमीन नाप डालूं कुछ ठिकाना है! एक दिन में पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूंगा। दिन आजकल लंबे होते हैं और पैंतीस मील!—कितनी जमीन उसमें आ जायगी! उसमें से घटिया वाली तो बेच दूंगा या किराये पर उठा दूंगा, लेकिन जो चुनी हुई बढ़िया होगी वहां अपना फार्म बनाऊंगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होंगे। दो आदमी भी रखने होंगे। कोई डेढ़ सौ एकड़ में तो काश्त करुंगा। बाकी चराई के लिए।"

दीना रातभर पड़ा जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाता रहा। देर-रात कहीं थोड़ी नींद आई। आंख झपी होगी किसी के बाहर से खिलखिलाकर हंसने की आवाज उसके कानों में आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है? उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगों का वह सरदार ही बाहर बैठा जोर-जोर से हंस रहा है। हंसी के मारे अपना पेट पकड़ रक्खा है। पास जाकर दीना ने पूछना चाहा, "आप ऐसे हंस क्यों रहे हैं?" लेकिन अभी पूछ पाया नहीं था कि देखता क्या है कि वहां सरदार तो है नहीं, बल्कि वह सौदागर बैठा है, जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश में मिला था ओर जिसने इस जमीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहां तुम कैसे हो और कब आये? लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नहीं, बल्कि वही पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज-पार की जमीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह किसान भी नहीं है,

बल्कि खुद शैतान है, जिसके खुर हैं और सींग है। वही वहां बैठा ठट्टा मारकर हंस रहा है। सामने उसके एक आदमी पड़ा हुआ है —नंगे पैर, बदन पर बस एक कुर्त्ता-धोती। जमीन पर वह आदमी औंधे मुंह बेहाल पड़ा है। दीना ने सपने में ही ध्यान से देखा कि ऐसा पड़ा हुआ आदमी कौन है और कैसा? देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नहीं, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देखकर मारे डर के वह घबरा गया। इतने में उसी आंख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने में आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बातें देख जाता है। अंह्! यह सोचकर मुंह मोड़ दरवाजे के बाहर झांककर जो देखा तो सवेरा होनेवाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हें अब जगा देना चाहिए। चलने में देर ठीक नहीं। वह खड़ा हो गया और गाड़ी में सोते हुए अपने आदमी को जगाया। कहा कि गाड़ी तैयार करो। खुद कोल लोगों को बुलाने चल दिया।

जाकर कहा, "सवेरा हो गया है। जमीन नापने चल पड़ना चाहिए।" कोल लोग सब उठे और इकट्ठे हुए। सरदार भी आ गये। चलने से पहले उन्होंने चाय की तैयारी की और दीना को चाय के लिए पूछा। लेकिन चाय में देर होने का खयाल कर उसने कहा, "अगर जाना है तो हमको चल देना चाहिए। वक्त बहुत हो गया।"

कोल तैयार हुए और सब चल पड़े। कुछ घोड़े पर, कुछ गाड़ी में। दीना नौकर के साथ अपनी छोटी बहली में सवार था।

फावड़ा उसने साथ रख लिया था। खुले मैदान में जब पहुंचे, तड़का फूट ही रहा था। पास एक ऊंची टेकड़ी थी, पार खुला बिछा मैदान। टेकड़ी पर पहुंचकर गाड़ी-घोड़ों से सब उतर आये और एक जगह जमा हुए। सरदार ने फिर आगे जाने कितनी दूर तक फैले मैदान की तरफ हाथ उठाकर दीना से कहा कि देखते हो, जहांतक यह सब, आंख जाती है वहांतक, हमलोगों की जमीन है। उसमें जितनी तुम चाहों, ले लो।

दीना की आंखें चमक उठीं। धरती एकदम अछूती पड़ी थी। हथेली की तरह हमवार और मुलायम। काली ऐसी कि बिनौला। और जहां कहीं जरा निचान था, वहां छाती-छाती जितनी तरह-तरह की हरियाली छाई थी।

सरदार ने अपने सिर की रोएंदार टोपी उतारी और धरती पर रख दी। कहा "यह निशान रहा। यहां से चलो और यहां आ जाओ। जितनी जमीन चल लोगे, वहीं तुम्हारी।"

दीना ने भी रुपये निकाले और टोपी पर निगकर रख दिये। फिर उसने पहना हुआ अपना कोट उतार डाला और धोती को कस लिया। अंगोछे में रोटी रक्खी, आस्तीनों चढ़ाई, पानी का बन्दोबस्त किया, आदमी से फावड़ा लिया, और चलने को तैयार खड़ा हो गया। कुछ क्षण सोचता रह गया कि किस तरफ को चलना बेहतर होगा। सभी तरफ का लालच था।

उसने तय किया कि आगे देखा जायगा। पहले तो सामने सूरज की तरफ ही चला चलूं। एक बार पूरब की ओर मुंह करके खड़ा हो गया, अंगड़ाई लेकर बदन की सुस्ती हटाई और धरती के

किनारे सूरज के मुंह चमकाने का इंतजार करने लगा।
सोचने लगा कि मुझे वक्त नहीं खोना चाहिए और ठंड-ठंड में रास्ता अच्छा पार हो सकता है। सूरज की पहली किरण का उनकी ओर आना था कि दीना, कंधे पर फावड़ा संभाल, खुले मैदान में कदम बढ़ाकर चल दिया।
शुरु में वह न धीमे चला, न तेज। हजार-एक गज चलने पर वह ठहरा। वहां एक गड्ढा किया और घास ऊंची चिन दी कि आसानी से दीख सके। फिर आगे बढ़ा। उसे बदने में फुर्ती आ गई। उसने चाल तेज कर दी। कुछ देर बाद दूसरा गड्ढा खोदा। अब पीछे मुड़कर देखा। सूरज की धूप में टेकड़ी साफ दीखती थी। उस पर आदमी खड़े थे और गाड़ी के पहियों के आरे तक चमकते दीखते थे। अंदाजन तीन मील तो वह आ गया होगा। धूप में ताप आता जाता था। कुर्ते पर से बास्कट उतारकर उसने कंधे पर डाल ली और फिर चल पड़ा। अब खासी गर्मी होने लगी। उसने सूरज की तरफ देखा। वक्त हो गया था कि कुछ खाने-पीने की भी सोची जाती।
"एक पहर तो बीत गया। लेकिन दिन में चार पहर होते हैं। अंह्, अभी जल्दी है। लेकिन जूते उतार डालूं।" यह सोच उसने जूते उतारकर अपनी धोती में खोंस लिये और बढ़ चला। अब चलना आसान था।
सोचा, "अभी तीन-एक मील तो और भी चला चलूं। तब दूसरी दिशा लूंगा। कैसी उमदा जगह ह। इसे हाथ से जाने देना हिमाकत है; लेकिन क्या अजब बात है कि जितना आगे बढ़ो,

उतनी जमीन एक-से-एक बढ़कर मिलती है।"

कुछ देर वह सीधा बढ़ा चला। फिर पीछे मुड़कर देखा तो टेकड़ी मुश्किल से दीख पड़ती थी और उस पर के आदमी रेंगती चींटी-से मालूम होते थे और वहां धूप में जाने क्या कुछ चलता हुआ-सा दीख पड़ता था।

दीना ने सोचा, "ओह, मैं इधर काफी बढ़ आया हूं। अब लौटना चाहिए।" पसीना बेहद आ रहा था और प्यास भी लग आई थी। यहां ठहरकर उसने गड्ढा किया, ऊपर घास को ढेर चिन दिया। उसके बाद पानी पीकर सीधा बाईं। तरफ मुड़ गया। चलता चला गया, चलता चला गया। घास ऊंची थी और गरमी बढ़ रही थी। वह थकने लगा। उसने सूरज की तरफ देखा। सिर पर दोपहर हो आई थी।

सोचा, अब जरा आराम कर लेना चाहिए। वह बैठ गया। रोटी निकालकर खाई और कुछ पानी पिया। लेटा नहीं कि कहीं नींद न आ जाय। इस तरह कुछ देर बैठ, फिर आगे बढ़ चला।

पहले तो चलना आसान हुआ। खाने से उसमें दम आ गया था। लेकिन गरमी तीखी हो चली और आंखों में उसके ऊंघ-सी आने लगी। तो भी वह चलता ही चला गया। सोचा कि तकलीफ घड़ी-दो-घड़ी की है, आराम जिंदगी भर का हो जायगा।

इस तरह भी उसने काफी लम्बी राह नापी। वह बाईं तरफ मुड़ने वाला ही था कि आगे जमीन उपजाऊ दिखाई दी। उसने सोचा कि इस टुकड़े को छोड़ना तो मूर्खता होगी। यहां सनी की बाड़ी ऐसी उगेगी कि क्या कहना! यह सोच उसने उस टुकड़े को भी

नाप डाला और पार आकर गड्ढे का निशान बना दिया। फिर दूसरी तरफ मुड़ा। जो टेकड़ी की तरफ देखा तो ताप के मारे हवा कांपती-सी मालूम हुई। उस कंपकंपी के धुंधकारे में से वह टेकड़ी की जगह मुश्किल से चीन्ह पड़ती थी।

दीना ने सोचा कि क्षेत्र की ये दो भुजाएं मैंने ज्यादा मैंने नाप डाली है। अब इधर कुछ कम ही रहने दूं। वह तेज कदमों से तीसरी तरफ बढ़ा। उसने सूरज को देखा। सूरज कोई दो-तिहाई। अपना चक्कर काट चुका था। मुकाम से अभी वह दस मील दूर था। उसने सोचा कि छोड़ा जाने भी दो। मेरी जमीन की एक बाजू छोटी रह जायगी तो छोटी सही। लेकिन अब सीधी लकीर में मुझे वापस चलना चाहिए। जो ऐसे कहीं दूर निकल गया। तो बाजी गई। अरे, इतनी ही जमीन क्या थोड़ी है!

यह सोच दीना ने वहां तीसरे गड्ढे का निशान डाल दिया और टेकड़ी की तरफ मुंह कर ठीक उसी सीध में चल दिया।

नाक की सीध बांधकर सवह टेकड़ी की तरफ चला। लेकिन अब चलते मुश्किल होती थी। धूम उसका सत ले चुकी थी। नंगे पैर जगह-जगह कट और छिल गये थे और टांगें जवाब दे रही थीं। जरा आराम करने का उसका जी हुआ, लेकिन यह कैसे हो सकता था? सूरज छिपने से पहले उसे वहां पहुंच जाना था। सूरज किसी की बाट देखता बैठा नहीं रहता! वह पल-पल नीचे ढल रहा था।

उसके मन में सोच होने लगा कि मुझसे बड़ी भूल हुई। मैंने इतने पैर पसारे क्यों? अगर कहीं वक्त तक न पहुंचा तो?

उसने फिर टेकड़ी की तरफ देखा, फिर सूरज की तरफ। मुकाम से अभी वह दूर था और सूरज धरती के पास झूक रहा था। दीना जी-तोड चलने लगा। चलने में सांस फूलती और कठिनाई होती थी; लेकिन तेज-पर तेज कदम वह रखता गया। बढ़ा चला, लेकिन जगह अब भी दूर बनी थी। यह देख उसने भागना शुरु किया। कंधे से वास्कट फेंक दी, जूते दूर हटाए, टोपी अलग की, बस साथ में निशान लगाने के लिए वह हल्का फावड़ा रहने दिया।

रह-रहकर सोच होता कि मैं क्या करुं? मैंने बिसात से बाहर चीज हथियानी चाही।

उसमें बना काम बिगड़ा जा रहा है। अब सूरज छिपने से पहले मैं वहां कैसे पहुंचूंगा?

इस सोच और डर के कारण वह और हांफने लगा। वह पसीना-पसीना हो रहा था, धोती गीली होकर चिपकी जा रही थी और मुंह सूख गया था। लेकिन फिर भी वह भागता ही जाता था। छाती उसकी लुहार की धौंकनी की तरह चल उठी, दिल भीतर हथौड़े की चोट-सा धड़कने लगा। उधर टांगे बेबस हुई जा रही थीं। दीना को डर हुआ कि इस थकान के मारे कहीं गिरकर ढेर ही न हो जाय।

हाल यह था, पर रुक वह नहीं सका। इतना भागकर भी अगर मैं जब रुकूंगा तो वे सब लोग मुझ पर हंसेगे और बेवकूफ बनायंगे, इसलिए उसने दौड़ना न छोड़ा दौड़े ही गया। आगे कोल लोगों की आवाज सुन पड़ती थी। वे उसको जोर जोर से कहकर बुला

रहे थे। इन आवाजों पर उसका दिल और सुलग उठा। अपनी आखिरी ताकत समेट वह दौड़ा।

सूरज धरती से लगा जा रहा था। तिरछी रोशनी के कारण वह खूब बड़ा और लहू-सा लाल दीख रहा था। वह अब डूबा, अब डूबा। सूरज बहुत नीचे पहुंच गया था। लेकिन दीना भी जगह के बिल्कुल किनारे आ लगा था। टेकड़ी पर हाथ हिला-हिलाकर बढ़ावा देते हुए कोल लोग उसे सामने दिखाई देते थे। अब तो जमीन पर रक्खी वह टोपी भी दीखने लगी, जिस पर उसकी रकम भी रक्खी थी। वहां बैठा सरदार भी दिखाई दिया- वह पेट पकड़े हंस रहा था।

दीना को सपने की याद हो आई।

उसने सोचा कि हाय, जमीन तो काफी नाप डाली है, लेकिन क्या ईश्वर मुझे उसको भोगने के लिए बचने देगा? मेरी जान तो गई दीखती है। मैं मुकाम तक अब नहीं पहुंच सकूंगा। दीना ने हसरत-भरी निगाह से सूरज की तरफ देखा सूरज धरती को छू चुका था। वह बची-खुची अपनी शक्ति से आगे बढ़ा। कमर झुकाकर भागा, जैसे कि टांगें साथ न देती हों। टेकड़ी पर पहुंचते-पहुंचते अंधेरा हो आया था। उसने ऊपर देखा-सूरज छिप चुका था। उसके मुंह से एक चीख–सी निकल गई, "ओह, मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई!"-यह सोचकर वह थमने को हुआ, लेकिन उसे सुन पड़ा कि खड़े हैं और उन्हें सूरज अब भी दीख रहा होगा। सूरज छिपा नहीं है, अगर्चे मुझको नहीं दीखता। यह सोचकर उसने लंबी सांस खींची और टेकड़ी पर आंख मूंदकर

दौड़ा। चोटी पर अभी धूप थी। पास पहुंचा और सामने टोपी देखी। बराबर सरदार बैठा वहीं पेट पकड़े हंस रहा था। दीना को फिर अपना सपना याद आया और उसके मुंह से चीख निकल पड़ी। टांगों ने जवाब दे दिया।

वह मुंह के बल आगे को गिरा और उसके हाथ टोपी तक जा पहुंचे।

"खूब! खूब!" सरदार ने कहा, "देखो, उसने कितनी जमीन ले डाली!"

दीना का नौकर दौड़ा आया और उसने मालिक को उठाना चाहा। लेकिन देखता क्या है कि मालिक के मुंह से खून निकल रहा है।

दीना मर चुका था। कोल लोग दया से और व्यंग्य से हंसने लगे। नौकर ने फावड़ा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमें लिटा दिया। सिर से पांव तक कुल छः फुट जमीन उसे काफी हुई।

(अनुवाद: जैनेन्द्र कुमार)